ISSN 2278-8808
An International Peer Reviewed
SJIF 2013 = 4.194
SCHOLARLY RESEARCH JOURNAL
FOR INTERDISCIPLINARY STUDIES

बीसवीं शती के अन्तिम दशक की कहानी
"सामाजिक परिवर्तन का दस्तावेज"

संध्या गर्ग, Ph. D.

एसोसिएट प्रोफेसर, जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी

सार

बीसवी शताब्दी का अंतिम दशक परिवर्तन का दशक है भूमंडलीकरण ने जहाँ बाजार को मुख्य घटक बना दिया, वहीं समाज के विभिन्न वर्गों में अपनी समस्याओं, स्थितियों के प्रति नवीन चेतना दृष्टिगत होती है। हिंदी कहानी के इस दशक में इस परिवर्तन व नवीन चेतना को कलमबद्ध करने की प्रवृति स्पष्ट उजागर होती है। स्त्री, दलित, आदिवासी विमर्श के साथ–साथ बेरोजगारी, पश्चिम के प्रवाह में नैतिक मूल्यों की अवहेलना करती युवा पीढ़ी, टूटते संयुक्त परिवार, बाजार के प्रभाव में संबंधों का खोखलापन सभी को इस कहानी ने अपना वर्ण्यविषय बनाया है।

बीज शब्द – *मानसिकता–विद्रोह–चेतना, कुंठा, अस्मिता, विमर्श सामाजिक परिदृश्य – परिवर्तन अनिश्चय, मानसिक संत्रास, राष्ट्र संकल्पना*

कहानी विधा ने अपने आरंभ से आधुनिक कहानी तक की यात्रा में भाव और शिल्प के स्तर पर अनेक पड़ाव देखे हैं। नैतिक मूल्यों व सामाजिक मूल्यों को दर्शाती पंचतंत्र की कहानी जब आधुनिकता का बाना पहनती है तो सामाजिक सत्य, प्रगतिशील सोच, आर्थिक, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में मनुष्य की बदलती सोच को अपना आधार बनाती है। बींसवीं शताब्दी में वैश्विक स्तर पर हुए परिवर्तनों व शक्तिकरण और भूमंडलीकरण के प्रभाव में कई प्राचीन धारणाएँ ध्वस्त हुई और नई धारणाओं ने जन्म लिया। और यही आधुनिक कहानी का आधार भी बनी। गंगा प्रसाद विमल ने इस संदर्भ में लिखा है–"आधुनिकता की संवेद्य, दृष्टि वस्तुतः समग्र सामाजिक परिदृश्य को एक आलोचनात्मक दृष्टि से देखना हैं आधुनिक हिन्दी कहानी का निर्धारण इस आधार पर आसान हो जाता है।" (आधुनिक हिंदी कहानी–संपादन गंगाप्रसाद विमल) प्रस्तुत आलेख कहानी के बींसवी शताब्दी के अंतिम दशक में सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा से सम्बन्धित है। समाज का यह बदलाव निजीकरण, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की अवधारणा, पूरे विश्व में हो रहे आंदोलनों, शहरों में बढ़ते एकाकी परिवारों की संख्या, विदेशी

कंपनियों के आगमन के साथ बदलते नैतिक मूल्यों, देश से योग्य युवाओं का विदेश की ओर पलायन, मेट्रो शहरों में कामकाजी स्त्रियों के मध्य पुरातनता व स्त्री स्वातंत्र्य की धारणा का द्वंद्व आदि कारणों का परिणाम था।

राजनीतिक और आर्थिक संदर्भों की पड़ताल करें तो सता में असामाजिक तत्वों का प्रश्रय होने लगा। राजनीति देश सेवा का नहीं अनैतिक कार्यों व गैर कानूनी ढंग से धन अर्जन करने का माध्यम होने लगी थी। अवसर वादिता राजनीति के लिए एक जरूरी योग्यता बन गई। आर्थिक स्तर पर देखें तो कृषि कार्यों को छोड़कर लोग पास के शहरों में मजदूर बनने लगे थे, और मजदूर बाज़ार के चलते अपने कार्यों का उचित पारिश्रमिक नहीं पा रहे थें कम्प्यूटर रोजमर्रा के जीवन का आवश्यक हिस्सा बन रहा था और इस कारण से बेरोजगारी में निरंतर बढ़ोतरी हो रही थी। सारांश यह है कि आर्थिक और राजनतिक परिदृश्य, सामाजिक संबंधों के बदलते स्वरूप पर प्रभाव डाल रहा था।

बींसवी शताब्दी के अंतिम दशक की कहानी इस पूरे परिवर्तन की साक्षी रही। कहानीकार कहीं स्वयं इस परिवर्तन को झेल रहा था तो कहीं सहृदय होने के कारण समाज में अन्य व्यक्तियों में इस पीड़ा, दुविधा, अनिश्चय, संशय की प्रवृति का अनुभव कर रहा था। इस अंतिम दशक की अधिकतर कहानियाँ इसी मानसिक संत्रास व प्रतिकूल परिस्थितियों में मनुष्यता को बचाए रखने की मुहिम की कहानियाँ है। इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में "आधुनिकता के बारे में यह कहना आवश्यक प्रतीत होता है कि यह प्रक्रिया एक से अधिक दौरों से गुजरने की गवाही देती है। और इस संदर्भ में आधुनिक कहानी भी एक से अधिक भाव भूमि और विचार भूमि की साक्षी है। शशांक, उदय प्रकाश, शिवभूति, मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा, संजीव, स्वयं प्रकाश, अखिलेश, ओम प्रकाश बाल्मीकि, गीतांजलि श्री, जया जादवानी, मेहरुन्निसा परवेज, रमणिका गुप्ता, विभांशू दिव्याल, अरुण प्रकाश आदि कहानीकार इस दशक में मुख्य रूप से सामाजिक विषयों को अपनी लेखनी से अभिव्यक्ति दे रहे थे।

नब्बे के दशक की महत्वपूर्ण घटना भूमंडलीकरण की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया ने मनुष्य को पश्चिम की ओर उन्मुख किया। पूंजीवाद व बाजार वाद की प्रबल समर्थक इस प्रक्रिया ने मनुष्य की आत्मसंतुष्टि का माध्यम भौतिक वस्तुओं को बना दिया। बाज़ार के इस प्रभाव ने मनुष्य और समाज के सम्बन्धों को एक सिरे से बदल दिया। स्त्री–पुरूष संबंध भी इस दृष्टि से परिवर्तित हुए। पितृसत्ता समाप्त नहीं हुई पर उसे चुनौतियाँ मिलने लगी थी। स्त्रियाँ आत्मनिर्भर हो रही थीं और जीवन का अवलम्बन पुरूष को ही मानने की परम्परावादी सोच

भी कहीं टूट रही थी। भारतीय परिवारों में माँ का जो देवी स्थान है वह इन कहानियों में कहीं तिरोहित हो रहा था। 'चीफ की दावत' की माँ एक गैर जरूरी बोझ की तरह है, 'क्षमा करो हे वत्स' की माँ जो कि पुत्र की हत्या पर असहाय है, दूर्वा सहाय की माँ है जो कि बेबस, लाचार हैं। 'उलट बाँसी की माँ जो भरपूर परिवार होते हुए भी अकेली है और जब वह सोचती है कि उसे इस एकाकी जीवन में कोई साथी चाहिए तो पूरे परिवार का विरोध दिखाई देता है। प्रियवंद की कहानी 'बूढ़े का उत्सव एक ऐसी कहानी है जहाँ भारतीय परम्पराएँ व जीवन मूल्य दम तोड़ते दिखाई देते हैं, विकलांग बेटे को ठीक करने की उम्मीद में विधवा माँ उसे यौन सुख पहुँचाती है और अंततः अपराध बोध के चलते आत्महत्या कर लेती है। भयावह सच को दर्शाती यह कहानी संबंधों को ले कर एक भय उत्पन्न करती है।

'माँ' ही नहीं पिता भी भारतीय परिवार की आधार शिला है। अंतिम दशक की कहानियों में यह आधार शिला भी हिल रही हैं पिता की सत्ता का निरंतर रहने वाला तथ्य कहीं इन कहानियों में समाप्त होते दृष्टिगत होता है। ज्ञानरंजन की कहानी 'पिता' में पिता अपने मन को यह समझाते हैं कि वे घर के संरक्षक हैं और इसलिए घर के सदस्य आराम से रहते हैं और वे तपती गर्मी में बाहर अपनी खाट लिए बिना किसी विरोध के रहते हैं। 'पितृ ऋण' का पुत्र अपने पिता को स्वयं भिखारियों के बीच छोड़ आता है। शिवभूर्ति की कहानी 'भरतनाट्यम' का पिता भी उसी रिश्तों के समाप्त होने की प्रतिमूर्ति है जैसी कि 'बूढ़े का उत्सव' की माँ। वह अपनी बहू के भाग जाने पर अपने पुत्र से कहता है कि "क्यों रे कुत्ते नाक कटा ली न। हिजड़े! जनखे बूता नहीं था तो मुझसे कहा होता। मुझे भी नामर्द समझ लिया था क्या?" यह कौन सा पिता है, यह कौन सा परिवार है जहाँ बहू बेटी नहीं है बस सिर्फ एक औरत है। यह कौन सा परिवर्तन है? कौन सा समाज है? यह बाज़ार केवल भौतिक वस्तुओं तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि व्यक्ति की चेतना का अंश बन कर उसके संबंधों की हत्या कर रहा है।

एक अन्य कटु सत्य जो इन कहानियों में उभर कर आया, वह धार्मिक उन्माद व सांप्रदायिकता का है। 6 दिसम्बर' 1992 की बाबरी मस्जिद की घटना ने शतकों से चले आ रहे हिन्दु मुस्लिम भाईचारे की स्थितियों में जैसे चिंगारी लगा दी और उस की अग्नि में हम आज तक जल रहे हैं। गुजरात का गोधरा कांड, देश के विभिन्न भागों में बम ब्लास्ट, संसद पर हमला, मुबंई के साम्प्रदायिक दंगे जैसे एक लड़ी सी बन गई जिसने भारतीय जनमानस को झकझोर दिया, भयभीत कर दिया और विरोध तथा प्रतिशोध की भावना से भर दिया।

स्वयं प्रकाश की कहानी 'पार्टीशन' विभाजन की घटना नहीं दिखाती बल्कि आज भी अंदर ही अंदर उस पार्टीशन के घाव निरंतर रहने की कहानी है, जहाँ व्यक्ति मानव नहीं है। बल्कि हिंदु–मुसलमान है, कभी भी राजनीतिक या सांप्रदायिक वीमत्स उद्देश्यों को पाने की खातिर इस जख्म को हरा कर दिया जाता है। "आदमी जात का आदमी" इस भयानक सत्य को वाणी देती है जहाँ यदि कोई उस घटना को भूलना भी चाहे तो नई घटनाएँ उसे फिर वहीं काले अंधे अतीत की ओर ढकेल देती हैं। गीतांजलि श्री की कहानी 'बेलपत्र' में दो विभिन्न संप्रदायों के ओम और फातिमा का विवाह सामाजिक मान्यताओं की बलि चढ़ जाता है। फतिमा जिसे दूसरे धर्म में विवाह करने में कोई भी दिक्कत नहीं थी, धीरे–धीरे परिस्थितियों के दबाव में अपना मुसलमान होना 'मिस' करने लगती है। तब ओम के स्मरण में अपने जगदीश काका का यह कथन कौंध जाता है। "देखो दुनिया के आगे चाहे मुस्कराता मुखौटा चढ़ा लोगे, पर अंदर–अंदर चूर–चूर होते जाओगे। झेल सकते हो, हिम्मत है तो आगे बढ़ो।" इसी तरह की अन्य कहानियाँ हैं भीष्म साहनी की 'झुटपुटा', महीप सिंह की एक मरता हुआ दिन', नीलकांत की एक रात का मेहमान व स्वयं प्रकाश की कहानी 'क्या तुमने कोई सरदार भिखारी देखा है' यह कहानियाँ–1984 के दंगों की वेदना व पीड़ा को अभिव्यक्ति देती हैं। अंतिम कहानी तो 1947 के विभाजन की कहानियों की ही अगली कड़ी लगती है जहाँ दंगों की आग में केवल मानवीयता जल रही थी और उस मानवीयता के मलवे का मालिक बन कर बैठा था मनुष्य के अंदर का पशु।

भारतीय समाज की एक राष्ट्र की संकल्पना में सबसे बड़ा बाधक तत्व है उसकी जाति समस्या। निम्न जातियों के पिछली सदियों के शोषण ने नई पीढ़ी में एक विद्रोह की भावना भर दी हालांकि इसे नई चेतना भी कह सकते है अपने को सक्षम व शिक्षित आत्मनिर्भर व स्वाभिमानी हो कर समाज में अपना स्थान बनाने की। नब्बे के दशक की कहानियाँ इस वर्ग की पीड़ा, वेदना, अपमान और विवशता को बेबाकी से अभिव्यक्ति करती हैं। ओम प्रकाश बाल्मीकि की कहानी सलाम में कमल की माँ यह पता लगने पर कि उसके मित्र हरीश के पिता एक सफाई कर्मचारी हैं, कमल को साफ मना कर देती है कि ऐसे मित्र नहीं बनाने चाहिए। सुशीला टाक भौरे की कहानी 'सिलिया' पानी पर सवर्णों के अधिकार को अस्वीकार करती है और जातिगत भेदभाव को मानवीयता का सबसे बड़ा दुश्मन बताती है। श्योराज सिंह बैचेन की कहानी 'शोध प्रबन्ध' शिक्षण संस्थानों में दलितों के शोषण और संकीर्ण मानसिकता की कहानी है। लेकिन यहाँ जब रीना उस शोषण का शिकार होने पर बाद में

प्रोफसर को थप्ड़ मारती है तो कहीं वह बदलाव की हवा की ओर भी संकेत करती है – "यह लो अपना प्रबंध, कहते हुए उसने अपनी गोद से नवजात बच्चा निकाल कर प्रोफेसर की गोद में रख दिया। .....इससे पहले कि वह संभलता, रीना ने पूरे ज़ोर से उसके गाल पर जोरदार तमाचा जड़ दिया।" इसी प्रकार ओम प्रकाश बाल्मीकि की कहानी 'यह अंत नहीं' में गाँव में दलित युवती बिरमा के अपमान की पीड़ा को बताती है, अर्थ यह कि एक ओर शोध छात्रा रीना और ग्रामीण अनपढ़ युवती बिरमा केवल दलित होने के कारण एक ही श्रेणी में खड़ी हैं जहाँ शिक्षा कोई महत्व ही नहीं रखती। लेकिन दोनों ही युवतियाँ प्रतिकार और विरोध करती हैं और समाज को भी एक नई आशा देती हैं – "ना बिरमा यह अन्त नहीं है तुमने हमें ताकत दी हैं हार को जीत में बदलेंगे, लोगों में विश्वास जगाकर, ताकि फिर कोई बिसन मोहरा ना बने।"

ऊपरलिखित दोनों कहानियाँ बीसवीं शती के अंतिम दशक में स्त्री की बदलती स्थिति की ओर भी संकेत करती हैं आरक्षण, आत्मनिर्भरता, शिक्षा ने उसे पितृसत्ता को चुनौती देने के लिए प्रेरित किया। अनेक महिला कहानीकारों ने भी इस स्वर को अपनी लेखनी के द्वारा उद्‌बोधित किया। मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान की रचनाओं में स्त्री अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती दिखाई देती है। एक कारण यह भी है कि उनकी अभिव्यक्ति और भोगे हुए यथार्थ के बीच कोई फासला नहीं है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'बेटी' में लड़कियों की शिक्षा को लेकर समाज में किस प्रकार अवहेलना की दृष्टि काम करती है, का संकेत है। संभवतः इसके पीछे एक कारण यह भी है कि कहीं स्त्री शिक्षित हो कर अपने अधिकारों की माँग न कर दे। जया जादवानी की कहानी 'जब पेड़ों से पत्ते गिरते हैं' में दादाजी का कथन "औरतों को डंडे की नोक पर रखना चाहिए, तभी वे सीधे रहती हैं।" पुरूष के इसीभय की ओर संकेत करती है। वहीं दादी का यह कथन "औरत तेरे पैर की जूती है। कोख पर लात मारता है छिः लानत है तुझपर, लानत है।" इस सत्य को बताता है कि स्त्री को संगठित होना होगा, एक दूसरे के लिए आधार बनना होगा तभी समाज में बदलाव संभव है।

नब्बे के दशक की सबसे महत्वपूर्ण घटना भूमंडलीकरण है। इस ने विश्व को एक फलक पर ला खड़ा किया। उदारीकरण से उत्पन्न समस्याएँ बाजार का अधिपत्य, अपनी जड़ों से टूटकर दूसरी संस्कृति के पौधों पर जा लटकने वाले युवा मन की सांस्कृतिक मूल्य हीनता इस समय की कहानियों का मुख्य विषय है। संजीव की कहानियाँ 'ब्लैकहोल', 'नस्ल',

अखिलेश की कहानी 'चिट्ठी', 'शापग्रस्त', संजय खाती की कहानी 'पिंटी का साबुन', शैलेन्द्र की कहानी 'डिनरपार्टी', विभ्यांशु दिव्याल की कहानी 'मंत्र', ऐसी ही कहानियाँ हैं जो कि इस बात को गंभीरता से चित्रित करती हैं कि भूमंडलीकरण ने मानवीय आकांक्षाओं को जो एक नया आसमान दिखाया, उसे छूने के लिए व्यक्ति संबधों, नैतिकता, समाज, हर मर्यादा को अंगूठा दिखाने को तैयार है। अखिलेश की कहानी 'घाल मेल' आदर्शवाद और उपभोक्तावाद के द्वंद्व को दर्शाती है। गीता का यह कथन कि 'कोई अच्छी सी नौकरी कर लो। इससे तुम अपने को अधिक दाम में बेच सकोगे।' संबंधों के बाजार का स्पष्ट वर्णन है।

भूमंडलीकरण के प्रभाव स्वरूप जहाँ इन कहानियों में एक ओर स्त्री के प्रयासों का चित्रण है जहाँ वे समाज के पुरूष सुरक्षा से अधिकारों को चुनौती देती हैं तो वहीं उनके प्रति बढ़ते हिंसात्मक अपराधों की भी कहानियाँ हैं क्योंकि पुरूष की सामन्तवादी सोच यहाँ तक तो बर्दाशत करती है कि स्त्री पैसे कमा कर लाए पर साथ ही वह उसकी परंपरागत छवि ही चाहता है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'फैसला' की बसुमती इसी द्वन्द में है कि वह अपने द्वारा कमाए प्रधान के पद को अपनी आत्मनिर्भरता का घंटनाद माने या विवाह संस्था में बनी रहने के लिए रणवीर के अत्याचारों को सहती रहे। स्त्रियों का बड़े पदों पर स्थान बनाना पुरूष वर्चस्व को अंगूठा दिखाना था। अभी तक कार्य के बँटवारे में भी लैंगिक भेदभाव दिखाई देता था। घर में मेहमानों की सेवा करती, पच्चीस पकवान बनाती स्त्री शेफ नहीं थी। घर की आर्थिक व्यवस्था को चलाती स्त्री किसी बड़े आर्थिक संस्थान की अध्यक्ष नहीं थी और यदि थी तो बहुत कम संख्या थी। मृदुला गर्ग की कहानी 'समागम' में नायिका की बेटी दूसरे शहर में नौकरी करती है पर उसका पति उस की प्रशंसा नहीं करता बल्कि कहता है –"आजादी, चुनाव का अधिकार मुक्त चिंतन दुनिया को बदल डालने के सपने, विरोध, समाज सेवा, बकवास। अपने अहं को तुष्ट करने के खोखले साधन हैं सब। सारा कुसूर तुम्हारी मान्यताओं का है खुद लीक से हट कर जीने के सपने देखे। पूरे नहीं हुए तो बेटी पर थोप दिये।" महिम का यह कथन स्त्री के सपनों को मरने पर विवश कर देता है।

स्त्री जिन स्थितियों से असंतुष्ट रही, उनके प्रति विद्रोह नहीं कर पाती संभवतः कोई साथ या सहयोग न मिलने के कारण। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी "मन नाहीं दस बीस" में चंदना इसी पीड़ा को झेलती दिखाई देती है। पिता की इच्छा के कारण प्रेमी को छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति से विवाह कर लेने पर वह दिन रात बच्चा न पैदा करने के ताने सहती है। जबकि सत्य यह है कि उसका पति इस योग्य ही नहीं है। इस सत्य के बावजूद जब उसे

अपराधिनी साबित करने का सिलसिला समाप्त नहीं होता तब वह अपने पति और देवर को धतूरा खिला देती है। यह कहानी स्त्री के उस अपमान और अवहेलना की गाथा है जहाँ सही होने पर भी स्वयं को साबित करना उसके लिए सरल कार्य नहीं है। 'प्राइवेट लाइफ' गीतांजलि श्री की कहानी है जिसमें नायिका विद्रोह के लिए तैयार है। वह अपने जीवन को किसी की शर्तों पर नहीं जीना चाहती चाहे वह विवाह जैसी संस्था हो, परिवार हो या समाज हो। यहाँ स्त्री क्योंकि आत्म निर्भर व पढ़ी लिखी है तो वह निर्णय भी लेती है

मन्नु भंडारी की कहानी 'त्रिशंकु' की माँ कभी नाना बनकर अपनी बेटी को नियमों की परिधि में बाँधना चाहती है तो कभी अपने को आधुनिक मानते हुए उसे स्वतंत्रता देती है। पर ऐसी स्थिति सुखद नहीं है, वह माँ बेटी के मध्य संबधों को तनाव ग्रस्त कर देती है। मेहरूनिस्सा परवेज की कहानी 'विद्रोह' भी विद्रोह की केवल सोच है, प्रत्यक्ष में नायिका साहस कर नहीं पाती। संभवतः स्त्री होने के कारण उसके लिए स्थितियाँ अधिक कठिन होती हैं क्योंकि व्यक्ति अस्मिता की लड़ाई और फिर स्त्री होना उसके संघर्ष को दोहरे स्तर पर ला खड़ा करता है।

इस दशक की कहानियों में समाज के अन्य वर्गों की समस्याओं, पीड़ा व सामाजिक आर्थिक नवीन चेतना व संघर्ष को भी कुछ कहानीकारों ने अपना विषय बनाया है। एक ओर यदि विकास की मुख्य धारा को समझते और अपनाते हुए आदिवासी व दलित समाज का चित्रण है तो दूसरी ओर इन्ही वर्गों में अशिक्षा, अंधविश्वास व स्त्रियों के शोषण का भी मार्मिक व सत्य वर्णन है। मेहरूनिस्सा परवेज की कहानी 'टोना' इसी कलेवर की कहानी है, जहाँ इस समाज में स्त्रियों के प्रति दुर्व्यवहार पर लेखिका की कलम चली है। रामधन लाल मीणा की कहानी 'अप्रत्याशित' में नायक पिछड़े वर्ग का होने के कारण अपने जीवन का सर्वस्व गँवा कर भी न्याय नहीं पाता। उसका बेटा प्रीतम भी गाँव छोड़ देता है पर संभवतः उस न्याय व्यवस्था से जुड़े लोगों की हत्या करने के बाद। क्योंकि लेखक कहता है –"गुस्सा बोली में न उतर कर हाथों में उतर आ रहा है।" भालवंद्र जोशी की कहानी 'पहाड़ों पर रात' आदिवासी समाज को विकास के नाम पर ठगे जाने की कथा है। राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतू उन्हें एक मोहरा बना लिया जाता है। संजीव की प्रसिद्ध कहानी 'दुनिया की सबसे हसीन औरत' एक आदिवासी जनजाति की स्त्री की संघर्ष गाथा है, वह शोषण तो सह रही है पर जब इस पीड़ा को वह रेल में बैठी दूसरी स्त्री से साझा करना चाहती है तो उस स्त्री को बहिन संबोधन पर भी आपति है। किस प्रकार स्त्री ही स्त्री की सहायता नहीं करती।

वहीं दूसरी ओर दलित समाज की स्थिति को स्पष्ट करती ओम प्रकाश बाल्मीकि की कहानी सलाम, इस वर्ग की नई पीढ़ी में आई चेतना की ओर संकेत करती है। इस कहानी का नायक सवर्णों के घर जा कर सलाम करने की प्रथा को अपमान जनक मानता है और उसका विरोध करता है। यह स्थिति परिवर्तन की ओर संकेत करती है जब व्यक्ति को अपनी स्थिति का कारण समझ आता है तभी वह उसके परिवर्तन की ओर भी उन्मुख होती है। बाबूराव बागुल की कहानी 'विद्रोह' में परभू जब अपने बेटे को पढ़ने के बाद भी भंगी की नौकरी में लगाना चाहता है तो वह मना कर देता है, वह कहता है कि 'मैं पढ़ाई पूरी होने पर सुकरात की तरह विद्वान बनने पर इस अमानुष प्रथा का, अस्पृश्यता का नाश करने वाला हूँ।' मनुष्य को यह अधिकार है कि उसे उसकी योग्यता और क्षमता के आधार पर सम्मान मिले न कि जाति के आधार पर।

इन सभी विद्रोहों को सही स्वरूप में आगे चलाने के लिए स्पष्टतया अपनी स्थितियों के प्रति असंतोष, परिवर्तन के प्रति जागरूकता, सही नेतृत्व, समूह की संगठन शक्ति सभी का होना अनिवार्य है। दलित, आदिवासी, स्त्री सभी विमर्शों को इस दशक की कहानी स्वर देती है और साथ ही परिवर्तन के प्रति आशान्वित भी करती है।

निष्कर्ष/समाहार – नब्बे के दशक अथवा दूसरे शब्दों में बीसवीं शती के अन्तिम दशक की कहानी अपने समाज में विद्रोह की चेतना, सामाजिक परिवर्तन, बाज़ार के प्रभुत्व, नये उभरते विमर्शों की कहानी है। एक ओर कहानीकार समाज में स्त्रियों के शोषण, उनके अधिकारों की माँग को समाज द्वारा विभिन्न टैग के अंतर्गत अनैतिक घोषित करने की रणनीति, राजनीतिक व्यवस्था का अपने स्वार्थों के लिए सामाजिक मुद्दों को मोहरा बनाने की नीति पर बेबाकी से कलम चलाते हैं। दूसरी ओर यह कहानी समाज के अन्य पिछड़े वर्गों की भी आवाज बनती है जहाँ वह इन वर्गों को मुख्य धारा में जोड़ने के लिए संकल्पबद्ध दिखाई देती है। उस दशक की कहानी की यह प्रकृति ही उसे पूर्व की कहानी से अलग एक विशिष्ट स्थान देती है और भविष्य की कहानी की नवीन चेतना का प्रथम सोपान बना देती है।

संदर्भ ग्रंथ

1.	अखिलेश	शापग्रस्त	राधाकृष्ण प्रकाशन
2.	ओम प्रकाश बाल्मीकि	सलाम, घुसपैठिए	राधाकृष्ण प्रकाशन
3.	गीतांजलि श्री	अनुगूँज	राजकमल प्रकाशन
4.	जया जादवानी	जब अन्दर के पानियों में कोई सपना काँपता है	वाणी प्रकाशन
5.	नासिरा शर्मा	गूंगा आसमान	बाग्देवी प्रकाशन
6.	महेश दर्पण	चेहरे	प्रवीण प्रकाशन
7.	मेहरूनिस्सा परवेज	मेरी बस्तर की कहानियाँ	वाणी प्रकाशन
8.	मैत्रेयी पुष्पा	चिन्हार	आर्य प्रकाशन मंडल
9.	विमांशु दिव्याल	अब मत आना किन्नी	अनुराग प्रकाशन
10.	संजीव	दस प्रतिनिधि कहानियाँ	किताब घर प्रकाशन
11.	स्वयं प्रकाश	आदमी जात का आदमी	आधार प्रकाशन
12.	कमलेश्वर	मेरा पन्ना	शब्दाकार प्रकाशन
13.	गंगा प्रसाद विमल	आधुनिक हिंदी कहानी	ग्रंथलोक प्रकाशन